इकाई 4 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ (भाग 2)

इकाई की संरचना

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ (भाग 2)
4.3 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों का परिचय
4.4 सारांश
4.5 शब्दावली
4.6 अभ्यास प्रश्नों की उत्तरमाला
4.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.0 उद्देश्य

वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों का अध्ययन करने के विषय में प्रस्तुत इकाई के वर्णन से आप :

- वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों का उल्लेख कर सकेंगे
- वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों के रचनाकारों को भी बता सकेंगे
- मानक ग्रन्थों में वर्णित सिद्धान्तों का उल्लेख कर सकेंगे
- मानक ग्रन्थों के परिचय भी बता सकेंगे
- वास्तुशास्त्र के मूलभूत सिद्धान्तों को बताने वाले ग्रन्थों का उल्लेख कर सकेंगे

4.1 प्रस्तावना

इस खण्ड की तीसरी इकाई में आपने वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों के विषय में भाग 1 में पूर्व में ही अध्ययन कर लिया है। प्रस्तुत इकाई वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों के सन्दर्भ में भाग 2 से सम्बन्धित है। वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों के भाग 1 के वर्णन में जिन आचार्यों और ग्रन्थों के विषय में जानकारी शेष रह गई थी, उन्हीं का विस्तार पूर्वक ज्ञान देने के लिए आप के अध्ययन की सुविधा के लिए दूसरी इकाई में विषय का प्रस्तुतीकरण किया गया है।

वास्तुशास्त्र का अर्थ बहुत व्यापक है। इसमें वास्तुकार सहित सभी कलाओं का समावेश भी हो जाता है। वास्तुशास्त्र की सम्पूर्ण व्याख्या कलाओं के बिनानहीं की जा सकती। वास्तुशास्त्र के विज्ञान को बताने वाले ऋषि महर्षि नेबहुत कुछ हमें दिया है। उन्हीं के बताए हुए तथ्यों के आधार पर आचार्यों में नए-नए ग्रन्थों का संकलन किया है। इस इकाई में उन्हीं संकलित तथ्यों का अध्ययन आप सुगमतापूर्वक करेंगे।

इस प्रकार उक्त तथ्यों का अध्ययन कर लेने के पश्चात् आप वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों के अध्ययन में वर्णन किए गए तथ्यों की व्याख्या करने और उन्हें भली-भांति समझाने में सक्षम हो जाएंगे।

4.2 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ (भाग 2)

भवनों का निर्माण ताप-शीत और वर्षा से सुरक्षा की आवश्यकता से प्रत्येक जीवित प्राणी को जन्म से ही होती है। इन्ही आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वास्तुशास्त्र का आरम्भ हुआ है। वास्तुशास्त्र का जन्म कब हुआ इस सम्बन्ध में थोड़ा वाद विवाद है और वेदों तथा पुराणों में इस विषय में जो प्रमाण उपलब्ध होते हैं उनसे प्रतीत होता है कि प्राचीन आर्यों के काल में जो घर बनते थे, वैसा और अलंकृत होते थे तथा उन्हें घास-बांस-लकड़ी और मिट्टी जैसे नाशवान पदार्थों से बनाया जाता था। इस योग को कुटीर योग भी कह सकते हैं इसके बाद काष्ट युग आया जिसकी अवधि काफी लम्बी रही। इस अवधि में काष्ट निर्मित भवनों का निर्माण आरम्भ हुआ, तत्पश्चात आरम्भ हुआ ईंटों का प्रयोग। इन में मिट्टी के कोई और शेष उपलब्ध नहीं है कारण यह है कि इन कारों के निर्माण में जिस प्रकार की सामग्री का उपयोग किया गया वह चिरस्थाई नहीं थी। सीरिया वास्तुकला के भी बहुत कम अवशेष उपलब्ध हैं, जो उपलब्ध हैं वह मात्र दिनों से निर्मित भवनों के ही हैं। वास्तुशास्त्र के अर्थ अत्यन्त व्यापक हैं और उसमें वास्तुकार सहित सब कलाओं का समावेश भी हो जाता है वास्तुकला का पारंपरिक क्षेत्र मन्दिरों राजमहल ओ जलाशयों उद्यानों निवास स्थानों दुर्गों राजमार्गों का निर्माण तथा नगर आयोजन आदि का रहा है। ललित कला को वास्तुकला का एक उपविभाग माना जाता था क्योंकि ललित कला में निपुण कलाकार जिन मूर्तियों की रचना करते थे उन्हें वास्तुकला का अलंकारिक तत्व ही माना जाता था। इस प्रकार वास्तुशास्त्र की सम्पूर्ण व्याख्या में कला और वास्तुकला दोनों क्षेत्रों का समावेश है। वास्तुशास्त्र के विज्ञान को जन्म देने वाले हमारे ऋषि महर्षि थे उन्होंने वास्तुशास्त्र विषयक जिन पदों की रचना की वह काल के घर में समा जाने के कारण आज उपलब्ध नहीं है उनकी मूल कृतियों के जो शेष रह गए हैं उनके आधार पर बाद में विद्वानों ने नए नए ग्रन्थों का संकलन किया। इस प्रकार नये आचार्यों के ग्रन्थों का संरक्षण हुआ, जो मानक ग्रन्थों के कसौटी पर उतरते हैं जैसे –

1. बृहद्संहिता
2. अपराजितपृच्छा
3. मानसार
4. मुहूर्तचिन्तामणि
5. प्रासादमण्डन
6. रूपमण्डन
7. राजवल्लभमण्ड्ल
8. देवतामूर्ति प्रकरण
9. वास्तुरत्नाकर
10. मनुष्यालय चन्द्रिका
11. वास्तुरत्नावली
12. समरांगणसूत्रधार
13. युक्तिकल्पतरु
14. वास्तुकला निधि

15. वास्तुप्रदीप
16. वास्तुसार
17. बृहद्वास्तुमाला
18. राजबल्लभ
19. मुहूर्तचिन्तामणि
20. वास्तुविज्ञान
21. शिल्पसंग्रह

4.3 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों का परिचय

बृहद्संहिता

दैवज्ञ वाराहमिहिर विरचित बृहत्संहिता जो प्राचीन भारतीय खगोल विज्ञान का (ज्योतिष शास्त्र) एवं वास्तुशास्त्र का सर्वप्रामाणिक एवं मौलिक ग्रन्थ है। यह 6 वीं शताब्दी ईस्वी (या पहली शताब्दी ईसा पूर्व) में लगभग 4000 संस्कृत छन्दों (श्लोकों) में लिखा गया था, वाराहमिहिर को वास्तुविद्या, गणित, खगोल विज्ञान और ज्योतिष का एक महान वैज्ञानिक विद्वान माना जाता था। बृहत-संहिता एक विश्वकोश के रूप में लिखी गई है। जिसमें खगोल विज्ञान से लेकर अटकल और वास्तुकला, कृषि और रत्न जैसी विभिन्न कलाओं को परिभाषित किया गया है। इस ग्रन्थरत्न मे वास्तु - विद्या पर बढ़ा ही सुन्दर एवं वैज्ञानिक विवेचन है । वराहमिहिर इसके लेखक हैं, जो महाराज विक्रमादित्य के नवरत्नों (कालिदास श्रादि) में से एक थे, ऐसी पुरानी परम्परा है। इस ग्रन्थ में यद्यपि वास्तुविद्या पर केवल थोडे ही अध्याय मिलते हैं परन्तु उनका विवेचन बड़ा ही मार्मिक है। 53 वें अध्याय (वास्तु- विद्या) में प्रारम्भिक प्रवचनों में वास्तु चयन, भूमि-परीक्षा, वृक्षारोपण, दारु-श्राहरण, पद-विन्यास आदि पर विवेचन मिलता है । 'प्रासाद लक्षण नामक 56वें अध्याय में बीस प्रकार के प्रासादों का वर्णन है, साथ ही वास्तुकला सम्बन्धी इसके वैज्ञानिक विवरण विशेष उल्लेख्य हैं । मन्दिर की भूमि, द्वार, गर्भ-द्वार, चित्रण, प्रतिमा माप, पीठ-माप, भूमिका- उच्छ्रययादि पर सुन्दर प्रकाश डाला गया है। 'चज्रलेप-लक्षण' (57) में सीमेंट का निर्माण तथा अन्य भवनद्रव्यों पर विवेचन है। इसी प्रकार 'शयनासन - लक्षण' (76) में जैसा नाम से स्पष्ट है भवनफर्नीचर, श्रावनए शय्या पर्येक आादि पर विवेचन किया गया है । 'प्रतिमा-लछण' (58) मे वराहमिहिर ने पाषाणकला पर विवेचन किया है वह बड़ा ही वैज्ञानिक है जो ग्रागे के पटलो में विशेष रूप से उल्लेखनीय है । बृहत्संहिता की एक विशेषता यह है कि इस ग्रन्थ में लगभग 7 वास्तु-विद्या के आचार्यों का उल्लेत्र मिलता है - गर्ग, मनु, वशिष्ठ, पराशर, विश्वकर्मा, नग्नजित् तथा मय । इसके अध्यायों के नाम इस प्रकार है -

अध्याय 1 - परिचयात्मक

अध्याय 2 - ज्योतिष (ज्योतिषी)

अध्याय 3 - सूर्य के मार्ग पर (आदित्य-चार)

अध्याय 4 - चन्द्रमा के मार्ग पर (चन्द्र-चार)

अध्याय 5 - राहु (राहु-चार) के फल

अध्याय 6 - मंगल के मार्ग पर (भौम-चार)

अध्याय 7 - बुध के मार्ग पर (बुध-चार)
अध्याय 8 - बृहस्पति के मार्ग पर (बृहस्पति-चार)
अध्याय 9 - शुक्र के मार्ग पर (शुक्र-चार)
अध्याय 10 - शनि के मार्ग पर
अध्याय 11 - धूमकेतु पर (केतु)
अध्याय 12 – अगस्त्य चार
अध्याय 13 - सप्तर्षि के नक्षत्र पर (सात ऋषि या ऋषि)
अध्याय 14 - कर्म विभाग पर
अध्याय 15 - नक्षत्रों पर (नक्षत्र-व्युष)
अध्याय 16 - ग्रहों पर (ग्रह-भक्तियोग)
अध्याय 17 - ग्रहों की युति पर (ग्रहयुद्ध)
अध्याय 18 - चन्द्रमा की ग्रहों के साथ युति पर (शनिग्रहसमागम)
अध्याय 19 - ग्रहों के वर्षों पर (ग्रहवर्षाफल)
अध्याय 20 - ग्रहों की बैठक पर (ग्रहांगक)
अध्याय 21 - वर्षा-बादलों पर (गर्भालक्ष)
अध्याय 22 - वर्षा समर्थन दिवसों पर (गर्भ-धारणा)
अध्याय 23 - वर्षा पर (प्रवरण)
अध्याय 24 - रोहिष-योग पर
अध्याय 25 - स्वाति-योग: पर
अध्याय 26 - साठ-योग: पर
अध्याय 27 - हवाओं पर (वातचक्र)
अध्याय 28 - तत्काल वर्षा के लक्षण (सद्योवर्ष)
अध्याय 29 - फूलों और पौधों पर (कुसुमलता)
अध्याय 30 - गोधूलि घंटे के संकेत (संध्या-लक्षण)
अध्याय 31 - दिग्दाहा पर (क्षितिज पर चमक)
अध्याय 32 - भूकम्प के संकेत
अध्याय 33 - उल्का पर (उल्का)
अध्याय 34 - हेलो पर (परिवेश-लक्षण)
अध्याय 35 - इन्द्रधनुष के लक्षण (इंद्रायुध-लक्षण)
अध्याय 36 - हवाई शहर के लक्षण (गंधर्वनगर-लक्षण)
अध्याय 37 - नकली सूर्य पर (प्रतिसूर्य-लक्षन)
अध्याय 38 - धूल-तूफान पर (रजस-लक्षण)
अध्याय 39 - वज्र पर
अध्याय 40 - सस्य-जातक पर (सब्जी राशिफल)
अध्याय 41 - पदार्थों का वर्गीकरण (द्रव्य-निष्कय)
अध्याय 42 - कीमतों में उतार-चढ़ाव

अध्याय 43 - इन्द्रध्वज (इन्द्र के बैनर) पर
अध्याय 44 - दीप्ति समारोह (नृजनविधि)
अध्याय 45 - वाग्टेल पर (खंजना-कलाक्षन)
अध्याय 46 - पोर्टेंट्स या सार्वजनिक आपदा पर (उत्पता-आध्याय)
अध्याय 47 - मोटली विविध (मयूरसिट्रैक)
संहिता का अंत उचित (पहला आधा); दूसरे भाग की शुरुआत
अध्याय 48 - शाही स्नान (पुण्यस्नान)
अध्याय 49 - पासा पर (मुकुट की थाली)
अध्याय 50 - तलवार पर (खंग-लक्षण)
अध्याय 51 - अंग-विद्या (अंगों के माध्यम से भविष्यवाणी)
अध्याय 52 - पिंपल्स पर (पिटक-लक्ष)
अध्याय 53 - घर-निर्माण पर (वास्तु-विद्या)
अध्याय 54 - अंतर्धाराओं पर (दकार्गल)
अध्याय 55 - बागवानी पर
अध्याय 56 - मन्दिरों के निर्माण पर (प्रासाद-लक्षण)
अध्याय 57 - टिकाऊ सीमेंट पर (वज्रलेप-लक्षण)
अध्याय 58 - मन्दिर की मूर्तियों पर (प्रतिमा-लक्षण)
अध्याय 59 - वन में प्रवेश पर (वनसंप्रवेश या वानप्रवेश)
अध्याय 60 - मन्दिरों में मूर्तियों की स्थापना (प्रतिमा-प्रतिष्ठापन)
अध्याय 61 - गायों (गो) और बैलों (वभा) की विशेषताओं पर
अध्याय 62 - कुत्ते की विशेषताओं पर
अध्याय 63 - मुर्गा की विशेषताओं पर (कुक्कू-लक्ष)
अध्याय 64 - कछुए/कछुए की विशेषताओं पर (कर्म-लक्षण)
अध्याय 65 - बकरी की विशेषताओं पर (छग-लक्षण)
अध्याय 66 - घोड़े की विशेषताओं पर (अश्व-लक्षण)
अध्याय 67 - हाथी की विशेषताओं पर (हस्ती-लक्षण)
अध्याय 68 - पुरुषों की विशेषताओं पर (पुरुष-लक्षण)
अध्याय 69 - पांच महापुरुषों के लक्षण (पंच-पुरुष या पंच-महापुरुष)
अध्याय 70 - महिलाओं की विशेषताओं पर (कन्या-लक्षण)
अध्याय 71 - वस्त्रों के झिल्लियों से संकेत
अध्याय 72 - चौरियों पर
अध्याय 73 - छतरियों पर (छत्र-लक्षण)
अध्याय 74 - महिलाओं की स्तुति पर (स्त्री-प्रसंसा)
अध्याय 75 - स्नेह की जीत (सौभाग्य-करण)
अध्याय 76 - कामुक उपचार, शुक्राणु दवाएं और दवाएं (कंदर्पिका)
अध्याय 77 - इत्र की तैयारी (गंधायुक्ति)

अध्याय 78 - यौन सम्बन्ध पर (पुस्तुरी-समायोग)
अध्याय 79 - सोफे और सीटों पर (अय्यासन)
अध्याय 80 - रत्नों पर (रत्न-परीक्षा)
अध्याय 81 - मोतियों पर (मुक्ता-लक्षण)
अध्याय 82 - माणिक पर (पद्मराग-लक्षण)
अध्याय 83 - पन्ना पर
अध्याय 84 - दीपों पर
अध्याय 85 - दांत पर (दंतकाठ-लक्षण)
अध्याय 86 - सामान्य नियम (शकुन)
अध्याय 87 - क्षितिज के वृत्त पर (अंतर-तकरा)
अध्याय 88 - पक्षियों और जानवरों के अशुभ रोने (विरुता) पर
अध्याय 89 - कुत्तों के घेरे पर
अध्याय 90 - सियार के रोने पर (शिव-रुत)
अध्याय 91 - जंगली जानवरों की आवाजाही
अध्याय 92 - गायों की इच्छा (गो-इग्गीता)
अध्याय 93 - घोड़ों की इच्छा (अश्व-इग्गीता)
अध्याय 94 - हाथियों की मनोवृत्ति (हस्ती-वेशिता)
अध्याय 95 - कौवे का रोना (व्यास-विरुता)
अध्याय 96 - शगुन के पूरक (शकुन-उत्तरा)
अध्याय 97 - प्रभाव के फल के समय (पाक-अध्याय)
अध्याय 98 - नक्षत्रों पर (नक्षत्र-कर्मगुण)
अध्याय 99 - चन्द्र दिवस और आधा चन्द्र दिवस (तीथ-कर्मगुण) पर
अध्याय 100 - करणों के गुणों पर (कारण-गुण)
अध्याय 101 - नक्षत्रों में जन्म के प्रभाव पर (नक्षत्र जातक)
अध्याय 102 - राशि चक्र के संकेतों में विभाजन पर (राणी-विभाग)
अध्याय 103 - विवाह पर ग्रहों की युति का प्रभाव (विवाह-पहला)
अध्याय 104 - ग्रहों के गोचर पर (ग्रह-गोकारा)
अध्याय 105 - तारकीय देवता की पूजा पर (रूपसत्र)

अपराजितपृच्छा

अराजित द्वारा पूछे गये प्रश्नों को समेटे हुये यह ग्रन्थ संवाद रूप में है। यह स्थापत्य विज्ञान का एक अद्भुत एवं अन्य अप्रतिम ग्रन्थ है, जिसे भारतीय स्थापत्य -कला, मूर्तिकला एवं चित्रकला का प्रतिनिधि ग्रन्थ कहा जा सकता है। यह वास्तु शास्त्रीय ग्रन्थों में लब्ध प्रतिष्ठ ग्रन्थ है। इसमें शिल्प -परम्परा के समुचित सङ्कलन के साथ -साथ भारतीय स्थापत्य का व्यापक उद्देश्य तथा कला के आधार भूत तत्वों एवं ज्योतिर्विज्ञान की गाम्भीर्य-पूर्ण चर्चा अत्यन्त आत्मीयता के साथ की गयी है। अपराजितापृच्छा अर्थात अपराजित के प्रश्न वास्तुशास्त्र पर प्रमुख वर्गों के साथ भुवनदेव का 12 वीं शताब्दी का संस्कृत पाठ है। मुख्य रूप से संस्कृत पाठ, यह ग्रन्थ

उत्तर और पश्चिमी भारतीय परम्पराओं को दर्शाता है। पाठ में जैन वास्तुकला और कला पर अध्याय भी शामिल हैं। यह पाठ मन्दिर वास्तुकला (वास्तु), मूर्तिकला (शिल्पा), पेंटिंग (चित्र) और शास्त्रीय संगीत और नृत्य (संगीता, नृत्य) पर अपने वर्गों के लिए उल्लेखनीय है। इसकी कई अधूरी पांडुलिपियां गुजरात में 20वीं शताब्दी की शुरुआत में (विशेषकर बड़ौदा) और अन्य बाद में मध्य और उत्तर भारत में खोजी गई। इसमें कम से कम 239 सूत्र हैं, प्रत्येक सूत्र के बाद कई छंद हैं। इस संग्रह को सूत्रसंतान कहा जाता है, और इस प्रकार यह 7500 से अधिक श्लोकों में विस्तृत है। पाठ का पहला संस्करण और अनुवाद पोपटभाई मांकड़ द्वारा 1950 में प्रकाशित किया गया था, जबकि लाल मणि दुबे ने 1987 में पाठ पर अनुवाद और भाष्य (टिप्पणी) के साथ एक और महत्वपूर्ण अध्ययन प्रकाशित किया था। इस ग्रन्थ की रचना की सही तारीख स्पष्ट नहीं है। आम तौर पर स्वीकृत सीमा इसकी भाषा के आधार पर 1000 से 1200 सीई के बीच होती है, आंतरिक साक्ष्य जैसे कि यह उद्धृत करता है और इसको पुष्ट करता है, साथ ही साथ इसकी विशिष्ट शिक्षाओं का निर्माण वास्तविक मन्दिरों के साथ मेल खाता है और जिसे विश्वास के साथ दिनांकित किया जा सकता है। हालांकि, इसमें निर्दिष्ट मोल्डिंग के लिए सूक्ष्म माप जैसे विशिष्ट विवरण, साथ ही देवता वायु और यम के लिए इसके विनिर्देशों से पता चलता है कि अपराजिताप्रृच्छा का अन्तिम संस्करण 12 वीं शताब्दी में पूरा होने की संभावना थी। अपराजिताप्रृच्छा की विभिन्न पांडुलिपियों में भिन्नता दिखाई देती है, पाण्डुलिपि के रूप में बनाई गई संभावित त्रुटियों को सदियों से प्रक्षेपित और कॉपी किया गया था।

अपराजित विश्वकर्मा के चार मानस -पुत्रों में कनिष्ठ पुत्र हैं। इस ग्रन्थ में जहाँ प्रश्न है वहाँ उसका उत्तर भी है। प्रश्न एक योग्य पुत्र के द्वारा किये गये है और उत्तर भी एक प्रख्यात स्थापति विश्वकर्मा द्वारा दिये गये हैं ,जो कि स्थापत्य विज्ञान का एक प्रमुख ज्ञाता माने जाते है। इस प्रकार उक्त ग्रन्थ का शीर्षक चरितार्थ है। इस कृति को सूत्र सन्तान गुण कीर्ति प्रकाश या सूत्र – सन्तान भी कहा गया है। अपराजितपृच्छा की रचना- काल का विषय अनिश्चित है तथापि इसका रचना काल 12वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध और 13 वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध माना जा सकता है।

मानसार

वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में मानसार अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। मानसार शिल्पशास्त्र का प्राचीन ग्रन्थ है, जिसके रचयिता मानसार हैं। इसके 43 वें अध्याय में ऐसे अनेक रथों का वर्णन है जो वायुवेग से चल कर लक्ष्य तक पहुँचते थे। उनमें बैठा व्यक्ति बिना अधिक समय गवाँए गन्तव्य तक पहुँच जाता था। श्री प्रसन्न कुमार आचार्य ने बहुत परिश्रम से मानसर शिल्पशास्त्र को जोड़जोड़कर पुनः निर्मित किया और इसका अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया। यह ग्रन्थ सात भागों में प्रकाशित किया गया। मानसर शिल्पशास्त्र ब्रह्मा की स्तुति से आरम्भ होता है जो ब्रह्माण्ड के निर्माता हैं। यह ग्रन्थ शिव के तीसरे नेत्र के खुलने पर समाप्त होता है। इसके लगभग 70 अध्यायों में प्रथम आठ अध्यायों को एक भाग में रखा गया है। आगे के दस अध्यायों से दूसरा समूह बनता हैं। इसके बाद मानसार का केन्द्रीय भाग आता है। अध्याय 19 से अध्याय 30 में एकमंजिला भवन से लेकर 12 मंजिला भवन का वर्नन करते हैं। अध्याय 31 से अध्याय 50 में वास्तुशिल्प की चर्चा है। इसके बाद मूर्तिकला की चर्चा आती है जो अध्याय 51 से अध्याय 70 तक की गयी है। अध्याय 51 से अध्याय 70 की सामग्री को सामान्यरूप से दो भागों में बाँटा जा सकता है –

1. अध्याय 51 से अध्याय 65 तक एक समूह

2. अध्याय 66 से अध्याय 70 तक दूसरा समूह।

इस प्रकार वास्तुशास्त्रीय विषयों को संजोकर अपने अन्दर समाहित करने वाला यह विशालकाय ग्रन्थ वास्तुशास्त्रीय विषयों एवं विधाओं के लिए सिरमौर है। मानसार की अनेक हस्तलिपियों के कारण और उनको समझाने वाले रेखा चित्रों के अभाव में कोई भी विद्वान् उसे टीका - टीप्पणी सहित प्रकाशित करने का सहास कई वर्षो तक नहीं कर सका। मानसार में 70 अध्याय हैं। प्रथम 40 अध्यायों में भवन निवेश और नगर निवेश का वर्णन हैं। अग्रिम 10 अध्यायों में राजा के राजमुकुट, रथों, शय्या आदि साज – सम्मान का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। शेष 20 अध्यायों में वैष्णव, बौद्ध और जैन मूर्तियों के लक्षण उनके विविध अङ्गो की आनुपातिक माप और रचना – काल का विस्तृत उल्लेख मिलता हैं। इसके अध्यायों के नाम इस प्रकार हैं -

1. संग्रहः
2. मानोपकरणविधानम्
3. वास्तुप्रकरणम्
4. भूमिसंग्रहविधानम्
5. भूपरीक्षाविधानम्
6. शंकुस्थापनलक्षणम्
7. पदविन्यासलक्षणम्
8. बलिकर्मविधानम्
9. ग्रामलक्षणम्
10. नगरविधानम्
11. भूमिलम्बविधानम्
12. गर्भविन्यासविधानम्
13. उपपीठविधानम्
14. अधिष्ठानविधानम्
15. स्तम्भलक्षणम्
16. प्रस्तरविधानम्
17. सन्धिकर्मविधानम्
18. विमानलक्षणम्
19. एकतलविधानम्
20. द्वितलविधानम्
21. त्रितलविधानम्
22. चतुस्तलविधानम्
23. पंचतलविधानम्
24. षट्तलविधानम्
25. सप्ततलविधानम्

26. अष्टतलविधानम्
27. नवतलविधानम्
28. दशतलविधानम्
29. एकादशतलविधानम्
30. द्वादशतलविधानम्
31. प्राकारविधानम्
32. परिवारविधानम्
33. गोपुरविधानम्
34. मण्डपविधानम्
35. शालाविधानम्
36. गृहमानस्थानविधानम्
37. गृहप्रवेशविधानम्
38. द्वारस्थानविधानम्
39. द्वारमानविधानम्
40. राजहर्म्यविधानम्
41. राजांगविधानम्
42. राजलक्षणम्
43. रथलक्षणम्
44. शयनविधानम्
45. सिंहासनलक्षणम्
46. तोरणविधानम्
47. मध्यरंगविधानम्
48. कल्पवृक्षविधानम्
49. मौलिलक्षणम्
50. भूषणलक्षणम्
51. त्रिमूर्तिलक्षणम्
52. लिंगविधानम्
53. पीठलक्षणम्
54. शक्तिलक्षणम्
55. जैनलक्षणम्
56. बौद्धलक्षणम्
57. मुनिलक्षणम्
58. यक्षविद्याधरादिलक्षणम्
59. भक्तलक्षणम्
60. हंसलक्षणम्
61. गरुडलक्षणम्

62. वृषभलक्षणम्
63. सिंहलक्षणम्
64. प्रतिमाविधानम्
65. उत्तमदशतालविधानम्
66. मध्यमदशतालविधानम्
67. प्रलम्बलक्षणम्
68. मधूच्छिष्टविधानम्
69. अंगदूषणविधानम्
70. नयनोन्मीलनलक्षणम्

मुहूर्तचिन्तामणि

रामदैवज्ञ विरचित मुहूर्त चिन्तामणि ग्रन्थ अत्यन्त प्राचीन और प्रामाणिक है। इस ग्रन्थ में कुल 12 प्रकरण हैं जिनमें वास्तु प्रकरण एवं गृहप्रवेश प्रकरण अत्यन्त प्रचलित हैं। इसके प्रथम प्रकरण का नाम शुभाशुभ प्रकरण है, इसमें तिथियों की संज्ञा एवं विभिन्न प्रकार के योग-संयोग-कुयोग की बात की गई है। दूसरे प्रकरण का नाम नक्षत्र प्रकरण है, जिसमें नक्षत्रों के नाम, नक्षत्रों के स्वामी एवं नक्षत्रों के विभिन्न मुहूर्तो की बात की गई है। तीसरे प्रकरण का नाम संक्रान्ति प्रकरण है, इसमें संक्रान्तियों के नाम रात्रि के संक्रान्तियों का फल दिन के संक्रान्तिओं का फल इत्यादि विस्तार से बताया गया है। पुनः गोचर प्रकरण है जिसके अन्तर्गत सूर्य आदि ग्रहों का शुभ और अशुभ विचार क्रम वेध ग्रहण नक्षत्र के फल एवं मुहूर्त इत्यादि के विषय में बात किया गया है। पांचवें संस्कार प्रकरण में प्रथम रजोदर्शन में उत्तम मध्यम निकृष्ट नक्षत्रों की बातें की गई है एवं षोडशा संस्कारों के लिए मुहूर्त आदि का विस्तार से विचार किया गया है। अगला विवाह प्रकरण है, इस प्रकरण में विवाह के प्रश्न, प्रश्न विधि, विवाह कारक योग, वैधव्य योग, कुल्टा योग मृतवत्सा योग, विवाह भंग योग, एवं अष्टकूट को विस्तारपूर्वक समझाया गया है। इस प्रकरण में विभिन्न प्रकार के ग्रहों के लत्ता दोष, क्रांति साम्य, दोष की बात की गई है। वधू प्रवेश प्रकरण में विवाह के बाद प्रथम वर्ष के महीनों में स्वामी के घर में स्त्री के रहने का फल बतलाया गया है। अगला द्विरागमन प्रकरण है, इस प्रकरण में सम्मुख और दक्षिण शुक्र का दोष शुक्र के दोष का परिहार इत्यादि बतलाया गया है। अग्नि आधान प्रकरण इस प्रकरण में अग्नि आधान कालिक लग्न के यज्ञ कार्य की योग बताए गए हैं। राज्याभिषेक प्रकरण में नक्षत्र तथा लग्न शुद्धि राज्याभिषेक काल में ग्रहों की स्थिति और उसके फल की चर्चा की गई है। यात्रा प्रकरण में प्रश्न कालिक शुभाशुभ योग प्रश्न कालिक शुभ यात्रा योग, मास भेद से यात्रा के शुभाशुभ भेद विभिन्न प्रकार के धार्मिक यात्राओं की बात की गई है।

पुनः वास्तु प्रकरण में राशि द्वारा निषिद्ध वास स्थान, ग्राम, निषिद्ध वास वास स्थान चक्र ध्वज का प्रयोजन गृहारम्भ में निश्चित काल, गृह आरम्भ में वृषवास्तु चक्र गृह आरम्भ में सौर और चन्द्र महीनों की एकता का फल गृह आरम्भ में पंचांग शुद्धि देवालय आदि के स्थान भेद से राहु का मुख चक्र गृह कूप चक्र मकान के भीतर कहां क्या बनाना चाहिए इन विषयों के सम्बन्ध में द्वार चक्र आदि के विषय में विस्तार से चर्चा की गई है। अन्तिम गृह प्रवेश प्रकरण में गृहप्रवेश मुहूर्त, गृह प्रवेश, वास्तु पूजा आदि के नक्षत्र एवं सूर्य चक्र कलश वास्तुचक्र गृह प्रवेश के पश्चात कर्तव्य विधि एवं वास विधि की विस्तृत विवरण आचार्य ने मनोरम तरीके से प्रस्तुत किया है।

प्रासादमण्डन

यह ग्रन्थ मन्दिर निर्माण के वास्तु सम्मत सिद्धान्तों का साङ्गोपाङ्ग वर्णन करता हैं। सूत्रधारमण्डन कृत इस गन्थ में 8 अध्याय हैं। प्रासादमण्डन के द्वितीय अध्याय में जगती, तोरण, और देवता के स्थापन में दिशा के नियम का विशेष उल्लेख है प्रासाद के अधिष्ठान की संज्ञा जगती है। देव मन्दिर में वाहन निर्माण के विशेष नियम उक्त ग्रन्थ में वर्णित है।

मनुष्यालय चन्द्रिका

नीलकण्ठ प्रणीतमनुष्यालयचन्द्रिका ही एकमात्र ऐसा लघुकाय ग्रन्थ है जो वास्तुशास्त्र से सम्बद्ध विषयों को स्पष्टता पूर्वक प्रतिपादित करने वाला है एवं सर्वजनसंवेद्य है। इसमें भू परीक्षा, भूमि की भौगोलिक स्थिति शङ्कु द्वारा दिङ् निर्धारण,भूमि मापन, गृह के अधिष्ठान, प्रणाल, स्तम्भ, आच्छादन, शिखर निर्माण, शीर्ष निर्माण में दाक्षिणात्य स्थापत्य परम्परा, द्वार, कपाट, अर्गला, कील, उपद्वार, विभिन्न कक्ष, कूप, तडाग आदि का स्पष्ट तया विवेचन किया गया है।

मनुष्यालय चन्द्रिका ग्रन्थ में 7 अध्याय हैं तथा कुल 246 श्लोक हैं। इसमें मुख्य रूप से मानव के जीवन उपयोगी आवास गृह, गृह उपयोगी कूप, वापी, तथा आधार सहित उर्ध्व मंजिलों और उपयोगी द्वार, मान आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है। ग्रन्थ का प्रथम अध्याय भूपरीक्षा परिग्रह नाम से है और इसमें 33 श्लोक हैं। इसमें मुख्य रूप से आवास योग्य भूमि के चयन पर विचार किया गया है। ग्रन्थकार ने मंगलाचरण में विष्णु के यादव या श्री कृष्ण स्वरूप नृसिंह और गणपति की वन्दना से ग्रन्थ को प्रारम्भ किया है ।

ग्रन्थकार ने अपना परिचय नीलकंठन के रूप में प्रस्तुत किया है, रचनाकार नीलकंठन सर्वप्रथम वास्तुशास्त्र की परम्परा को कहते हैं और ब्राह्मण आदि के लिए आवास योग्य भूमि का चयन कर बनवाए गए आवास को सदैव दृष्टिगत रखने पर जोर देते हैं। रचनाकार ने सर्वप्रथम भूमि की परीक्षा आवश्यक बतलाई है और शाला तथा बीथी आदि के निर्माण के बारे में पहले ही निर्णय करने पर जोर दिया है। मनुष्यालय चन्द्रिका का द्वितीय अध्याय दिङनिर्णयादि शुभवीथी परिग्रहवास्तुदेवतानिर्णय है। इसमें सूत्र चिन्ह आंगन का कार्य बतलाया गया है। तीसरे अध्याय में मानभेदयोन्यादिनिर्णय रखा गया है, जिसमें विभिन्न प्रकार के अंगुल्यादि मान की चर्चा की जाती है, इसमें वेशभूषा वस्त्र आदि की संरचना पर बल दिया गया है। वास्तु कार्य के 21 अंगों के विषय में इसमें विस्तृत चर्चा की गई है। चौथे अध्याय में गृहाणामिष्टदीर्घविस्तारशालानिर्णय है, इसमें 29 श्लोक हैं। यह मुख्यतः साला विधान पर आधारित है इसमें स्थित आवास के लिए उचित विस्तार दीर्घ अन्तराल रखने का निर्देश दिया गया है। चतुः शाल का विवरण और उसका कोटि का वर्गीकरण भी इसी अध्याय में बतलाया गया है। पंचम और छठे अध्याय का शीर्षक नहीं है परन्तु पंचम अध्याय में कुल 40 श्लोक हैं जिसमें जल निष्कासन के लिए गृह आधार को ऊंचे रखना उपपीठ मल्लीकुट्टीम या पौधे स्थल आंगन गमन के नियमों के साथ-साथ अन्तराल बाद मान अधिष्ठान याकुल्ट स्तम्भ के सम्बन्ध में बताया गया है। छठे अध्याय में मातृका विचार है किन्तु इसे कुट्टलाधि मान शिखर विधेय नाम से वर्गीकृत किया गया है। इसमें 24 श्लोक हैं जो मुख्य रूप से विश्वकर्म भवन न्यास रूप लम्ब प्रमाण दिए गए हैं।

सातवें और अन्तिम अध्याय में 45 श्लोक हैं इसमें सर्वप्रथम स्वर्ण मन्दिर की विधि रूपों पर निबन्ध के लिए निम्न पट्टिका का प्रमाण उच्च तथा निम्न अष्टपद का मान आदि कहा गया है।

वास्तुमण्डन

सूत्रधारमण्डन विरचित इस ग्रन्थ में दिशा निर्धारण में सामान्य नियम की अपेक्षा भवन के मुख्य द्वार को पूर्व दिशा मानकर फ़िर कक्ष की वास्तु योजना पर कार्य करने का सङ्केत किया है। शल्योद्धार के प्रसंग में ग्रन्थकार अहिबल चक्र द्वारा भूमि गत धन अनुसन्धान की भी प्रेरणा देते है। वास्तुमण्डन के दूषण भूषण अध्याय में अनेक गुण दोषों की चर्चा है।

रूपमण्डन

सूत्रधारमण्डन विरचित रूपमण्डन भारतीय वास्तुशास्त्र परम्परा के मानक ग्रन्थों में अप्रतिम है, यद्यपि इसका प्रतिपाद्य विषय प्रतिमा रचना विज्ञान से सम्बन्धि है तथापि इसके प्रणेता ने अपनी इस कालजयी कृति को वास्तुशात्र के अन्तर्गत माना है –

विश्वरूपं नमस्कृत्य पूर्वतान्त्रनुसरातः।

मंदनास्तुनाते वास्तुशास्त्रं श्रीरूपमंदनम।

रूपमण्डन का उल्लेख अनेक सूचियों में प्राप्त होता है इस ग्रन्थ का रचनाकाल विवादित है, परन्तु बहुमान्य तिथि बारहवीं शताब्दी का उत्तरार्ध और तेरहवीं शताब्दी का पूर्वार्ध है। वर्तमान में उपलब्ध इस ग्रन्थ के सम्पादक श्रीवास्तव के अनुसार ग्रन्थकार ने इस ग्रन्थ की रचना में अपराजितपृच्छा का सुन्दर उपयोग किया है। इसके अधिकांश विवरण या तो अपराजित पृच्छा से या छायाग्रहण से उद्धरण देखने को मिलते हैं रूपमण्डन का प्रथम अध्याय मुख्य तया तालाधिकार है जिसके पूर्वांश मे प्रतिमा द्रव्य के गुण दोष का विवेचन है। मूर्ति निर्माण हेतु शिला चयन का विधान एवं प्रतिमा द्रव्य के रुप मे धातुओं, रत्नों, काष्ठ, और प्रवाल की भी उपयुक्तता का विस्तार से वर्णन है। इसमें 6 अधिकार है जिनका सामान्य परिचय इस प्रकार है–

1. तालाधिकार

   रूप मण्डन का प्रथम अध्याय मुख्यतया तालाधिकार है, जिसके पूर्व में प्रतिमा द्रव्य के गुण दोष का विवेचन किया गया है। आरम्भ में यह भी बताया गया है कि शास्त्र में केवल देव मूर्तियों का विवेचन होता है, और उनके निर्माण में शास्त्र के ही लक्षणों का मुख्यतया पालन करना चाहिए। मूर्ति निर्माण के लिए अच्छी अथवा शास्त्रविरुद्ध शिला का विवेचन भी इसमें किया गया है। मूर्ति के जीर्णोद्धार और प्रतिष्ठा, खण्डित और भग्न मूर्तियों का फल, देवताओं को मन्दिरों में ही प्रतिष्ठा, प्रतिमा की ऊंचाई के हिसाब से उसमें मूर्ति प्रतिष्ठा एवं शिल्पकारों में मूर्ति निर्माण तथा स्थापना सम्बन्धी परम्पराएं और मान्यताएं, ताल मन में प्रयुक्त मान की सबसे सूक्ष्म इकाई परमाणु से लेकर इसकी गणना में छाया, रेखा, यूका इत्यादि के विषय में विस्तृत रूप से बताया गया है।

2. देवतापूजन अधिकार

   रूप मण्डन के द्वितीय अध्याय में कुल 38 श्लोक हैं जिनमें विविध देवताओं का विचार किया गया है।प्रारम्भ में तो देवता पूजन सम्बन्धी विविध निषेध का विचार किया गया है। इसके बाद क्रमशः ब्रह्मा, सावित्री, ऋषि, विश्वकर्मा, नवग्रह, अष्टदिक्पाल आदि का विवेचन किया गया है। आयतन और प्रतीहारों के विवरण के साथ अन्य विषयों का भी विस्तृत विचार दूसरे अध्याय मे किया गया है।

3. देवतामूर्ति अधिकार

रूप मण्डन के तीसरे अध्याय में विष्णु के मूर्तियों और शालिग्राम का विस्तृत विवेचन किया गया है। विष्णु को वैदिक मान्यता त्रिविक्रम की कल्पना 24 प्रकार के विष्णु और विष्णु का विकास एवं रूप मण्डन में पद्मपुराण के पातालखण्ड के वर्णित विषयों के सम्बन्ध में विस्तृत विचारणा भी प्राप्त है। इसके अतिरिक्त अग्नि इत्यादि देवताओं विष्णु के अवतारों और जलाशायी विष्णु, गरुड़ एवं विष्णु की विशिष्ट मूर्तियों के विषय में विवेचन के साथ-साथ शालिग्राम की उपयोगिता शालिग्राम पर प्राकृतिक रूप से बनी रेखाओं के आधार पर उसमें विष्णु के स्वरूप विशेष की प्रतिष्ठा और शालिग्राम का महत्व विस्तार से बताया गया है।

4. शिवमूर्ति शिवलिंग लक्षणाधिकार

चौथे अध्याय में रूपमण्डन शिवमूर्ति शिवलिंग लक्षण अधिकार का वर्णन किया गया है। यह इस ग्रन्थ का सबसे बड़ा अध्याय है और इसमें 106 श्लोक हैं। भारतीय देववाद की शिव मूर्तियां प्रमुख तत्व है तथा शिव की अनेक तरह की मूर्तियों का विधान शास्त्रों में बतलाया गया है। रूप मण्डल में द्वादशशिव का विस्तृत विवेचन है इस ग्रन्थ के अनुसार द्वादश शिव की सूची में संयोजन वामदेव, अघोर, तत्पुरुष, ईश, मृत्युंजय, किरण, श्रीकान्त, विरुपाक्ष, सदाशिव, और शिव के विषद विवेचना की है। द्वादश शिव की गणना या विवेचन रूपमण्डन के पूर्व के ग्रन्थों में उपलब्ध नहीं होती है। एकादश रूद्र अवश्य ही सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। अपराजितपृच्छा में भी एकादश रूद्र की ही बातें प्राप्त होती हैं। शिव मूर्तियों के विषय में भी इस अध्याय में विवेचना की गई है।

5. शाक्ताधिकार

रूपमण्डन का पांचवा अध्याय शाक्ताधिकार है, इसमें गौरी आदि देवियों के अतिरिक्त गणेश, हेरम्ब, वक्रतुण्ड, क्षेत्रपाल और बटुकभैरव का भी मूर्ति विधान विस्तार पूर्वक बताया गया है। गौरी के छः स्वरूपों का वर्णन अपराजितपृच्छा में प्राप्त होता है। ऐसा ही सूत्रधारमण्डन में भी द्वादश गौरी और श्रीगौरी का चयन रुपमण्डन में किया गया है।

6. जैनमूर्ति लक्षणाधिकार

रूपमण्डन के छठे अध्याय का नाम जैनमूर्ति लक्षण अधिकार है। सूत्रधारमण्डन के काल में गुजरात और राजस्थान में जैन धर्म का बड़ा प्रभाव था, और जैन मन्दिरों तथा मूर्तियों के निर्माण का अधिक प्रचार था सूत्रधारमण्डन ने जैन प्रतिमा लक्षण का सूक्ष्म किंतु उपयोगी विवरण इस ग्रन्थ के छठे अध्याय में प्रस्तुत किया है। जैन साहित्य में जिनों अथवा तीर्थंकरों के मूर्ति लक्षणों का यत्र तत्र विवरण मिलता है। 24 तीर्थंकरों की प्रतिमा के लक्षणों में स्वतः भी बहुत भेद नहीं होता। यह तीर्थंकर के प्रतिमा के विषय में सभी प्रकार के भ्रान्तियों का खण्डन करने वाला अत्यन्त महत्वपूर्ण अध्याय है।

राजवल्लभमण्डन

राजवल्लभमण्डन नामक वास्तुशास्त्र का यह अद्वितीय ग्रन्थ राजस्थान के मेवाड के सुप्रसिद्ध स्थपति सूत्रधारमण्डन द्वारा लगभग 15 वीं के मध्य भाग में रचा गया था। प्रकृत ग्रन्थ के शीर्षक से स्पष्ट है कि इसका मुख्य उद्देश्य राजमहल, दुर्ग आदि की रचना नगर सन्निवेश तथा राज कर्मचारियों के भवनों के निर्माण हेतु वास्तु शास्त्रीय विवरण प्रस्तुत करना है। यद्यपि प्रसंग

वश ग्रन्थ में सामान्य जनता के भवनों की निर्मिति के विषय में भी निर्देश प्राप्त है किन्तु वे भी एक राजा की दृष्टि से किये गये है। ग्रन्थ मे यह भी निर्देश है कि जब राजा कोई नया नगर या ग्राम बसाये तो विविध प्रकार के भवनों का क्या स्वरुप हो, इसका ज्ञान उसे होना चाहिए। अन्तिम दो अध्याय मुख्यतः ज्योतिष परक है और शकुन शास्त्र से भी घनिष्ठ सम्बन्ध रखते है। यह विशालकाय ग्रन्थ 14 अध्यायों में विभक्त है।

देवतामूर्तिप्रकरण

सूत्रधारमण्डनकृत देवतामूर्तिप्रकरण ग्रन्थ 8 अध्यायों में विभक्त है। ग्रन्थ के अन्तर्गत शिला परीक्षा, प्रतिमा – प्रमाण, गुण – दोषाधिकार, प्रतिमाताल निर्णयाधिकार, प्रतिमा पद स्थान दृष्टि स्थानाधिकार, ब्रह्मा सूर्य नवग्रह दस दिक्पालाधिकार, विष्णु- शालिग्राम, शिला परीक्षा आदि भेदाधिकार, रुद्र मूर्ति लिंगा धिकार, जिन मूर्ति चतुर्विंशति यक्ष- यक्षिण्यधिकार, देवी- मूर्ति लक्षणाधिकार आदि मूर्तियों का विवेचन किया गया है।

वास्तुसौख्यम्

टोडरमल्ल द्वारा विरचित वास्तुसौख्यम् में 9 भागों मे विभक्त है। प्रथम भाग में ग्रन्थ का उद्देश्य, द्वितीय भाग में वृक्षशल्य विधि अपने आप में अद्भुत विज्ञान का द्योतक है। शकुन एवं प्रश्न वर्ण से शल्योद्धार का वर्णन, तृतीय भाग में वास्तुचक्र, शिला न्यासोपक्रम, चतुर्थ भाग में दिक् साधन, आय व्ययादि का विवेचन, पंचम भाग में राजा प्रभृति सर्व साधारण के गृहों का प्रमाण, षष्ठ भाग में वास्तु के देवी देवताओं का विभाग व मर्मस्थान का विवेचन, सप्तम भाग में गृह के मुख्य द्वार का निर्णय, अष्टम भाग में गृह निर्माण के मुहूर्त, नवम भाग में गृह जातक, शंकुरोपण, मन्त्रभाग, वास्तुपूजन आदि विषयों का वर्णन है।

वास्तुरत्नावली

निबन्ध ग्रन्थों की कोटि में स्वल्प किन्तु विषय की व्यापकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। मैथिल पण्डित दैवज्ञ जीवनाथ ने इस ग्रन्थ का प्रणयन किया। यह उस वंश से सम्बद्ध थे जिसने वेद वेदाङ्ग से लेकर ज्योतिष के त्रिस्कन्धो का विशेष अध्ययन, अध्यापन किया था। यह वंश कई शासको के यहाँ सम्मानित हुआ था। ग्रन्थ के रचयिता ने वास्तुरत्नावली में पूर्वसूरियों के श्लोकों का न केवल संग्रह किया वरन अपनी टीका भी दी। दस अध्यायों वाले इस स्वल्प ग्रन्थ में वास्तु विषयक नाना कृत्यों, मतों का यथावश्यक शास्त्रीय उल्लेख वर्णित है।

समराङ्गणसूत्रधार

समराङ्गणसूत्रधार बहु प्रसिद्ध भोजकृत वास्तु ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में सभी प्रमुख वास्तु शास्त्रीय विषयों का प्रतिपादन हुआ हैं। यह ग्रन्थ अत्यन्त पारिभाषिक एवं वैज्ञानिक हैं। इस ग्रन्थ में जन भवन राज भवन तथा देव भवनों के रचना सिद्धान्त की समुचित व्याख्या हुई है। समराङ्गणसूत्रधार का एक अर्थ युद्ध क्षेत्र का नियन्ता है जो कि भोज का विरुद्ध है। दूसरा अर्थ है सम्यक् चक्र वाले आङ्गनों का सूत्रधार अर्थात् वास्तु विद्। इस ग्रन्थ में 83 अध्याय है। समरांगण सूत्रधार भारतीय वास्तुशास्त्र से संबंधित ज्ञान कोसीय ग्रन्थ है जिसकी रचना धार के परमार वंश के राजा भोज ने किया था। इस ग्रन्थ में नगर योजना भवन शिल्प मन्दिर शिल्प मूर्तिकला तथा मुद्राओं सहित यन्त्रों के बारे में विस्तार से बताया गया है। यन्त्रों के लिए 31 संख्या का अध्याय अलग से यन्त्रविधान के नाम से वर्णित है। इस अध्याय में अनेकों यन्त्रों का वर्णन है लकड़ी के वायुयान, यान्त्रिक दरबान तथा सिपाही के वर्णन के साथ इनमें रोबोट की भी झलक देख सकते हैं। शास्त्र सम्पदा मुगल आक्रमण से नष्ट होने के बाद भी शास्त्रों में

अनेक विषय अभी भी उसी प्रकार प्राप्त होते हैं। विश्वकर्मा मुनि का ग्रन्थ इसके पूर्व प्रामाणिक माना जाता रहा है। इस ग्रन्थ में तरल यांत्रिकी एवं यान्त्रिक सिपाही का विशेष उल्लेख है।

इस प्रकार हम देख पा रहे हैं कि अनेक चमत्कारिक यन्त्रों फ़व्वारा, द्वारपाल यन्त्र, आकाशचारी यन्त्र आदि की भी चर्चा की गयी है।

युक्तिकल्पतरु

श्री भोजराज विरचित युक्तिकल्पतरु 13 युक्तियों में विभक्त विशालकाय ग्रन्थ है। नीतियुक्ति, द्वन्द्वयुक्ति, नगरयुक्ति, वास्तुयुक्ति, आसनयुक्ति, छत्रयुक्ति, अश्वयुक्ति, उपकरणयुक्ति, अलंकारयुक्ति, कर्केतनमणियुक्ति, अस्त्रयुक्ति, यात्रायुक्ति, धातु नौका युक्ति। विभिन्न मुनियों के ग्रन्थों का यत्न पूर्वक सार लेकर अपने तथा सबके संतोष के लिए राजा भोजयुक्तिकल्पतरु की रचना करता है।

इसमें नीति युक्ति के अन्तर्गत गुरु आदि का लक्षण, कृषि कर्म, यान, यात्रा, विग्रह आदि का वर्णन द्वंद्व युक्ति में कृत्रिम द्वंद्व युक्ति कृत्रिम द्वंद्व युक्ति की बात की गई है। नगर निर्माण आदि के विषय में इस ग्रन्थ में विस्तार से वर्णित है।

वसति लक्षण एवं वास्तु युक्ति के अन्तर्गत स्थान निर्णय, दिशा निर्णय, मान ,गुण दोष, वास्तु आरम्भ काल, वास्तु प्रवेश काल, द्वार निर्णय, प्राचीर निर्णय के द्वारा वर्णित चार प्रकार के वास्तु के खण्ड का निर्णय दिया गया है। वास्तु के लक्षण, विलास, गृह, रंग,आसन, युक्ति सामान्य उद्देश्य, पीठीदेश, शिला, पीठीकाष्ठ एवं कुम्भाग दंड लक्षण, ध्वजा युक्ति, निष्पताका ध्वज, उपकरण युक्ति रत्न परीक्षागार, उद्देश्य, वितान लक्षण, अलंकार युक्ति, पद्मराग परीक्षा, वज्र आदि के दोष इत्यादि और इनके मूल्य का वर्णन है। हीरक परीक्षा, हीरक के मूल्यों की परीक्षा, प्रवाल परीक्षा, गोमेद परीक्षा, मुक्ता परीक्षा, वैदूर्य परीक्षा, इन्द्रनील की परीक्षा, मरकत परीक्षा, कृत्रिम परीक्षा, पुष्पराज परीक्षा, कुलरणी परीक्षा, रुद्राक्ष परीक्षा, स्फटिक परीक्षा, खण्ड् परीक्षा, अश्व के आवर्त का गुण ,अश्व का दोष इत्यादि विषयों पर विस्तृत चर्चा की गई है।

वास्तुकलानिधि

वास्तुकलानिधि ग्रन्थ सौराष्ट्र देश के प्रख्यात आचार्य प्रभाशंकर सोमपुरा के द्वारा प्रणीत है। इस ग्रन्थ में भारतीय मदिरों की वास्तु-कला से सम्बन्धित अन्य भारतीय ग्रन्थों मे वर्णित विभिन्न प्रादेशिक शैलियों की चर्चा है। नागर, द्रविड, लातिन, भूमिज, फासना, वललभी आदि ऐसी कुल शैलियों की सख्या चौदह है पश्चिम भारत, अर्थात् गुजरात, राजस्थान और मेवाड मे, विशुद्ध नागरी शैली पायी जाती है। उत्तर भारत के प्रान्तों मे नागर शैली से उत्पन्न शैली पायी जाती है, और दक्षिण मे, कर्नाटक मे टोयशल शैली पायी जाती है तथा द्रविड शैली तमिल नाडू या दक्षिण भारतीय परम्परा में, परन्तु द्रविड शैली होयशल शैली से भिन्न है ऐसा इस ग्रन्थ में वर्णन है। आधुनिक युग मे, वास्तु-कला के प्रति दृष्टिकोण में जो ह्रास आया है, वह पश्चिमी शैलियों का अन्धानुकरण करने के कारण ही दिखता है। यह देखकर बडा दुख होता है कि शिक्षा के क्षेत्र मे भी यही उदासीनता दिखायी पडती है।

इसमे कोई सन्देह नही कि आधुनिक विज्ञान बडी तीज गति से प्रगति कर रहा है, और हमे उसके साथ कदम से कदम मिलाकर चलना चाहिए। इसके यह आशय कदापि नही है कि हम वास्तु-कला की अपनी देशज परम्पराओं को बिल्कुल भुला दे। इस ग्रन्थ मे वास्तु-कला की जिन शैलियों के अनुक्रम का विवरण और उनकी योजनाओं को प्रस्तुत किया गया है वे इस प्रकार हैं –

1. साघर
2. निरघर
3. प्रासाद
4. नागर
5. लातिन
6. वल्लभी
7. भूमिज
8. फासनाकार
9. द्रविड आदि।

इस ग्रन्थ में इन शैलियो की विशेष रूप से चर्चा की गयी है –

1. मध्य प्रदेश,
2. कलिंग,
3. आन्ध्र,
4. कर्नाटक की शैलियाँ।

इनके अतिरिक्त वास्तु कलानिधि ग्रन्थ में मन्दिर, पीठ, महापीठ, मडोवर, द्वार, जधा कलूसासन, तथा भारतीय वास्तु-कला की शैली मे निर्मित भवनों के अग्न उत्थापन का विवरण भी इस ग्रन्थ की एक विशेषता है।

वास्तुप्रदीप

यह ग्रन्थ 101 श्लोकों में निबद्ध है। मूल ग्रन्थ लुप्त हो चुका है, क्योंकि पाठ की दृष्टि से प्राप्त ग्रन्थ शुद्ध नहीं है। श्लोक कहीं-कहीं आधे अधूरे हैं कुछ स्थलों पर दो श्लोकों को मिलाकर एक श्लोक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। सम्भव है कि यह प्रतिलिपि कर्ता के प्रमाद से उत्पन्न दोष हो। ग्रन्थ के प्राप्त पाठ के निर्धारण हेतु उपर्युक्त ज्योतिष एवं वास्तुशास्त्र के ग्रन्थों का आश्रय लिया गया है। यह एक संकलन ग्रन्थ है, यह ग्रन्थ जनसामान्य के लिए उपयोगी बन सके इसके लिए कई ग्रन्थों के विषय वस्तु को इकट्ठा कर एक जगह संकलित किया गया है।

गृहवास्तुप्रदीप ग्रन्थ में भूमि चयन से लेकर गृह प्रवेश तक विधिवत विचार किया गया है। भूमि चयन से पूर्व जिस ग्राम नगर आदि में भूमि लेना हो उसके साथ गृह कर्ता कि ज्योतिष शास्त्रगत अनुकूलता आवश्यक मानी गई है, इसके लिए वर्ग एवं राशि के अनुसार ग्राम या नगर की दिशा एवं दशा पर भी विचार वर्ण के अनुसार भूमि का चयन, चयनित भूमि के निकट वृक्ष एवं कूपादि का विचार किया गया है। इस ग्रन्थ में निम्न बिंदुओं पर विस्तृत विचार किया गया है –

1. मृतिका परीक्षा
2. जल परीक्षा
3. भूमि शोधन
4. गृहारम्भ

इस प्रकार मृतिका परीक्षा की अन्यान्य विधियां, गृहप्रवेश का शुभ काल एवं गृह के वर्ग आदि का विचार विस्तृत रूप से किया गया है। इस ग्रन्थ में ज्योतिष पर विचार गृह प्रकरण में वर्ग मैत्री काकडी वर्ग एवं राशि के अनुसार दिशा विचार मास-नक्षत्र-पक्ष-तिथि-वार आदि का विचार वृषभ आदि चक्र शकुन विचार आयादि स्थिति एवं वेध के अनुसार द्वारों के फल, ग्रहों का परिवेश के अन्तर्गत गृह के चतुर्दिक वातावरण पर विचार आदि किया गया है। गृह के समीप वृक्ष आदि का भी विचार किया गया है। वास्तुशास्त्र के अन्तर्गत भूमि का चयन, मृतिका परीक्षा, परीक्षण, भूमि स्वामी की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के अनुसार ग्रह की स्थिति की लंबाई चौड़ाई पर विचार किया गया है।

वास्तुसार

सूत्रधारमण्डन विरचित वास्तुसार अत्यन्त प्राचीन एवं प्रमाणिक ग्रन्थ है। सूत्रधारमण्डन के द्वारा महाराणा कुंभा के समय में विश्व विख्यात चित्तौड़गढ़ की किला एवं कीर्ति स्तम्भ का निर्माण कराया गया था उनके द्वारा विरचित वास्तु सार में कौन सी दिशा में कौन से मुख का घर बनाना चाहिए, गृह निर्माण के मास फल, प्लव जमीन के ढलान का फल, किस वर्ण के लिए कौन से वर्ण की भूमि श्रेष्ठ रहेगी, गृहारम्भ के लिए वास्तु के नक्षत्र, छाया दोष, वेध दोष एवं आय के 8 प्रकार नक्षत्र की मूल राशि और नक्षत्र के गण अष्टकूट मिलान ताराचन्द्र मिलान कुंभ स्थापन 45 देवताओं का पद विभाग, मर्म वास्तु, नगर पुर एवं दुर्ग सहित ध्रुव आदि षोडश ग्रहों के छोटे बड़े विभाग, द्विशाल गृह, त्रिशालगृह, चतुः शाल, राज भवन, हस्ती शाल, राज गृहों के नाम, राज्य सिंहासन, छत्र, शैया, उद्यान का प्रमाण, चार प्रकार के प्रवेश, वेध दोष, गृह प्रवेश शकुन अपशकुन राज भवन के 15 गवाक्षों के स्वरूप आदि की विस्तृत चर्चा इस ग्रन्थ में प्राप्त होती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि इस ग्रन्थ रत्न में वास्तुशास्त्र के सभी प्रायोगिक विषयों का समावेश किया गया है।

बृहद्वास्तुमाला

वास्तुशास्त्र के प्रारंभिक विषयों को लेकर यह एक संग्रह ग्रन्थ है। इसमें गृह निर्माण सम्बन्धी बातों को बहुत ही बोधगम्य में तरीके से आचार्य ने प्रस्तुत किया है। प्राचीन आचार्य परम्परा के विभिन्न विषयों को लेकर जैसे जलाशय निर्माण, गजपृष्ठ, कूर्मपृष्ठ, पिण्ड निर्माण, ऋषियों के मत से दकार्गल, वृक्षायुर्वेद, अहिवल चक्र, सिद्ध पिण्ड और पिण्ड सारिणी शिलान्यास चरणी विचार, अनेक प्रकार के चक्र, देव मन्दिर निर्माण आदि का विचार इस ग्रन्थ में किया गया है। वास्तुशास्त्र के अनेक विषयों को यहां पर आचार्य ने विभिन्न आचार्यों के मतों को स्थापित किया है ग्रन्थकार ने ग्रन्थ में रामदैवज्ञ, वशिष्ठ, नारायण भट्ट, कल्पद्रुम, नारद, आचार्य वराहमिहिर इत्यादि के मतों को यथा-यथा स्थान पर स्थापित किया है।

राजवल्लभ वास्तुशास्त्र

यह ग्रन्थ सूत्रधारमण्डन द्वारा लिखा गया हे जिसको कुंभलगढ जैसे अजेय दुर्ग के स्थापत्य शास्त्री होने का गौरव रहा है। महाराणा कुम्भा के दरबार के इस सूत्रधार के कुल ने मेवाड में सोमपुरा स्थापत्य की नींव डाली और उस दौर में जबकि भारतीय कला और स्थापत्य पर विदेशी प्रभाव पड रहा था, भारतीय शिल्प ग्रन्थों की रचना कर लक्षणों को अद्भुत ढंग से बचाने में पूरी ताकत लगा दी। राजवल्लभ के अतिरिक्त उसकी देवता मूर्तिप्रकरणम्, प्रासादमण्डनम्, रूपमण्डनम्, वास्तुमण्डनम्, वास्तुशास्त्रम्, वास्तुसार मण्डनम़, आयतत्वम् आदि ग्रन्थ हैं। राजवल्लभ वास्तुशास्त्रम़ ग्रन्थ मूलतः कुंभलगढ में लिखा गया है। मण्डन की

मौलिक रचना है। चौदहअध्यायों में कुल 1472 श्लोक हैं। इसमें वास्तु के विभिन्न अंगों सहित ज्योतिष, शकुन, गणित आदि पर पर्याप्त विचार मिलता है। यह ग्रन्थ भारत में पहली बार 1854 में प्रकाशित हुआ था। इस ग्रन्थ की यह विशेषता रही कि देश में अनेक स्थानों पर वास्तु विज्ञान के अध्येताओं ने उसको पाठयक्रम में शामिल कर लिया।

इसके अतिरिक्त कई अन्य प्रमुख ग्रन्थ भी मानक ग्रन्थ की श्रेणी में हैं।

अभ्यास प्रश्न –1

1. बृहत्संहिता ग्रन्थ किसके द्वारा विरचित है

   अ. सूत्रधारमण्डन ब. अपराजित स. वाराहमिहिर द. नीलकण्ठ

2. विश्वकर्मा के मानस पुत्र थे -

   अ. अपराजित ब. सूत्रधारमण्डन स. वाराहमिहिर द. कोई नही

3. मानसार ग्रन्थ में कितने अध्याय हैं -

   अ. 78 ब. 70 स. 90 द.80

4. मुहूर्तचिन्तामणि के रचयिता हैं -

   अ. भुवनदेव ब. टोडरमल्ल स. रामदैवज्ञ द. गौरकर्मा

अभ्यास प्रश्न –2

निम्नलिखित में से सत्य असत्य का निर्धारण कीजिये

1. विश्वकर्मा के छः पुत्र थे। ( )
2. सूत्रधारमण्डन राजस्थान के मेवाड़ के स्थपति थे ( )
3. मनुष्यालय चन्द्रिका आचार्य नीलकंठ कृत नही है ( )
4. समरांगण सूत्रधार ग्रन्थ में 88 अध्याय हैं ( )

अभ्यास प्रश्न –3

रिक्तस्थान की पूर्ति कीजिये

1. वास्तु प्रदीप ग्रन्थ में .... श्लोक हैं
2. बृहद्वास्तुमाला एक प्रकार का .... ग्रन्थ है
3. राजवल्लभ वास्तुशास्त्र में ....अध्याय हैं।
4. अपराजित पृच्छा एक ....ग्रन्थ है।

4.4 सारांश

इस प्रकार आप ने इस इकाई के अध्ययन के बाद समझा कि वास्तुशास्त्र वेदों से ब्राह्मण आरण्यक उपनिषद काल से होते हुए आगम और पौराणिक काल में आकर अत्यधिक फलीभूत होते हुए विश्वकर्मा प्रकाश और मयमतम उत्तर और दक्षिण परम्परा के स्वतन्त्र ग्रन्थ वास्तुशास्त्र पर प्राप्त हुए। जिनकी परम्परायें पल्लवित और पुष्पित हुयी। इसके बाद विभिन्न प्रकार के विद्वानों ने मूर्तिकला-चित्रकल- प्रसाद-भवन आदि पर स्वतन्त्र ग्रन्थ लिखे। मानव मात्र के कल्याण अर्थ जीवन में सुख शांति की कामना चाहने वाला मानव अपने गृह के निर्माण के समय किन किन बातों का ध्यान रखें, एवं गृह में वृक्ष रोपने से लेकर राजा के महल तक का निर्माण इन्हीं मानक ग्रन्थों के आधार पर हुआ। क्योंकि प्राचीन परम्परा के जितने भी राजमहल दुर्ग दिखते हैं उन सब में इन ग्रन्थों में निर्दिष्ट नियमों को ध्यान में रखकर शिल्पियों के द्वारा एवं

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

स्थपतियों के द्वारा इन विषयों का निर्माण किया गया है।

4.5 शब्दावली

परिखा – नगर के चारो ओर बनायी जाने वाली सुरक्षा दीवार जिसे परिखा या परकोटा कहते हैं।

स्थपति – वास्तुशास्त्र के शिल्प पक्ष का विद्वान्

प्लव – ढलान

मृत्तिका परीक्षा – भूमि परीक्षण

वर्ण हेतु निवास – चारो वर्णों के लिये निवास

सिरमौर – श्रेष्ठ

4.6 अभ्यास प्रश्नों की उत्तरमाला

अभ्यास प्रश्न –1

1. स. वाराहमिहिर
2. अ. अपराजित
3. अ. 78
4. स. रामदैवज्ञ

अभ्यास प्रश्न –2

1. असत्य
2. सत्य
3. असत्य
4. सत्य

अभ्यास प्रश्न –3

1. 101
2. संग्रह
3. 14
4. संवाद

4.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

भारतीय वास्तुशास्त्र
वास्तुशास्त्र का इतिहास
वास्तु रत्नाकर
वृहद्वास्तुमाला
वृहत्संहिता